IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

कुमाऊँनी लोकसंस्कृति में महिला कलाकारों का योगदान

डॉ0 निर्मला जोशी
असि0 प्रोफेसर संगीत विभाग
एम0बी0जी0पी0जी0
महाविद्यालय हल्द्वानी, नैनीताल
(उत्तराखण्ड)

प्रभा बिष्ट (शोधार्थी)
एम0बी0जी0पी0जी0 महाविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल (उत्तराखण्ड)

संस्कृति

''संस्कृति से तात्पर्य ''संस्कृति'' शब्द संस्कृत ''कृ'' (करना) धातु में सम् (सम्यक) उपसर्ग और स्त्री प्रत्यय के योग से निर्मित है जिसका शाब्दिक अर्थ है– ''सम्यक रूप से किया जाने वाला आचार–व्यवहार''। सामान्यतः बोलचाल में संस्कृति का अर्थ सुंदर, रूचिकर, कल्याणकारी और परिष्कृत व्यवहार से लिया जाता है। अंग्रेजी में संस्कृत के पर्याय के रूप में ब्नसजनतम (कल्चर) शब्द प्रचलित है।''[1] विभिन्न भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों न` ''संस्कृति'' का`निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया है–

डॉ0 भगवान दास – ''मानसिक क्षेत्र में उन्नति की सूचक उसकी प्रत्येक सम्यक कृति संस्कृति का अंश बनती है, इसमें प्रधान रूप से धर्म, दर्शन, सभी ज्ञान–विज्ञानों और कलाओं, सामाजिक तथा राजनीतिक संस्थाओं और प्रभाओं का समावेश होता है।''[2]

श्री के0एम0 मुंशी – ''हमारे रहन सहन के पीछे जो हमारी मानसिक अवस्था, मानसिक प्रकृति है, जिसका उद्देश्य हमारे अपने जीवन को पिरष्कृत, शुद्ध और पवित्र बनाना है तथा अपने लक्ष्य की प्राप्ति करना है, वही संस्कृति है, संस्कृति जीवन के प्रति हमारा दृष्टिकोण है।''[3]

डॉ0 ब्रजलाल वर्मा – ''संस्कृति शब्द से उन सभी मानवीय चेष्टाओं की अभिव्यक्ति की जाती है, जो धार्मिक, आध्यात्मिक और लौकिक गतिविधियों के कारण परम्परा का रूप धारण कर लेती हैं।''[4]

अतः कहा जा सकता है कि ''परम्परा से प्राप्त किसी मानव समूह की निरन्तर उन्नत मानसिक अवस्था उत्कृष्ट वैचारिक प्रक्रिया व्यवहारिक शिष्टता, आचारगत पवित्रता, सौन्दर्यभिरूचि आदि की परिष्कृत, कलात्मक तथा सामूहिक अभिव्यक्ति ही संस्कृति है।''[5]

संस्कृति सम्पूर्ण समाज का प्रतिबिम्ब होती है। जन्म से कोई भी सुसंस्कृत नहीं होता समाज ही व्यक्ति को सुसंस्कृत बनाता है, अतः संस्कृत अर्जन पर आधारित है संस्कृति द्वारा ही किसी समाज की नैतिक और सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। संस्कृति का स्वरूप समय–समय पर परिवर्तित होता रहता है। देशकाल की भिन्नता होन` पर भी विभिन्न संस्कृतियों में कुछ न कुछ मूलभूत आंतरिक एक्य की प्रवृति पाई जाती है।

कुमाऊँनी लोकसंस्कृति

कुमाऊँनी लोकसंस्कृति यहां के मौसम और जलवायु के अनुरूप ही है। कुमाऊँ एक पहाड़ी प्रदेश है और इसलिये यहाँ ठण्ड बहुत होती हैं। इसी ठण्डी जलवायु के आसपास ही उत्तराखण्ड की संस्कृति के सभी पहलू जैसे
रहन–सहन, वेशभूषा, लोककलाएं, इत्यादि, घूमते हैं। कुमाऊँ पहाड़ियों का क्षेत्र लोक विद्या में प्रचुर है और अजुआ–बकौल, नरसिंह और घाना, लोक कथाओं के गंगनाथ की कथाएं और हरू–सैम, गोलु, की पोंराणिक कथाएं हैं। इनमें से कई कहानियां विभिन्न प्रकार की धुनों में लिखी जाती है और न्योली, भलनौल, छपेली, झोड़ा, चांचरी, शकुनाखर गीत प्रमुख हैं। इस क्षेत्र के लोकगीत हिमालय क्षेत्र की महिमा नंदादेवी, पंचाचूली, त्रिशूल आदि आकर्षण का प्रतीक हैं लोकगीतों में अक्सर खेतों, जंगलों, नदियों, जीवों और बर्फ से ढके चोटियों से संकेत मिलता है। सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से कुमाऊँनी संस्कृति की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं– सामाजिक जीवन की दृष्टि से कुमाऊँ का पूरा समाज चार वर्णों में विभक्त है– ब्राहमण, क्षत्रीय, वैश्य और शूद्र। य` सभी जातियॉ कई उपजातियों में विभक्त है। जाति व्यवस्था के बंधन अत्यन्त कठोर हैं। थाडू, बोक्सा, भोटिया और बनरौत जैसी आदिम जातियॉ भी इस क्षेत्र में निवासित हैं जो आज भी भाषा–बोली, रहन–सहन, खान–पान, आचार–विचार और विविध सामाजिक परम्पराओं के अतिरिक्त मुसलमान, सिक्ख और ईसाइ आदि कई अन्य जातियों के लोग भी यहॉ के लोकजीवन में रच बस कर अब यहीं के हो गये हैं। कुमाऊँ का समाज पुरूष प्रधान समाज है। समाज मं` नारी की स्थिति पुरूष की अपेक्षा गौण है। पहाड़ की महिलायें घर का तथा खेती–बाड़ी का सारा काम संभालती हैं इसके साथ–साथ यहॉ की महिलायें कुमाऊँनी संस्कृति को संजोये रखने में अपना भरपूर योगदान दे रही हैं। पहनावे के रूप में पुरूष प्रायः धोती, पजामा, अचकन और टोपी पहनत` है और स्त्रियॉ अंगिया, घाघरा, लहंगा और धोती पहनती हैं। विशेष अवसरों रंगवाली पिछौड़ा भी पहना जाता है। अंगिया और घाघरे का स्थान अब ब्लाउज और धोती लेते जा रहे हैं। शहरी क्षेत्रों में

कुर्ता पजामा का स्थान अब कोट पतलून लेते जा रहे हैं। नाक की लौंग फूल और नथ गले का सूता, जंजीर, नाल, हंसुली और गलोबन्द, कान के मुनड़े, झुपझुपी, हाथ के कंगन, पौंची, चुड़ियॉ, धागुले, और अंगुठियॉ, पैर के बिछुवे और पाजेब आदि स्त्रियों के सर्वप्रिय आभूषण हैं। आभूषण सोने, चॉदी, गिलट, पीतल आदि के बन` होते हैं, मूँगे की माला भी धारण की जाती है। कुछ समय पूर्व चेहरे में सौन्दर्य की अभिवद्धि हेतु स्त्रियॉ अपनी ठोड़ी पर चीड़ के हरे पत्तों के रस से गाजल (हरा तिल) गुदवाया करती थीं। कुमाऊँ के लोगों का सामान्य भोजन चावल, दाल, रोटी और साग है। सुबह दाल–चावल और संध्या को रोटी–साग खाया जाता है। दिन में कल्यो (कलेवा) किया जाता है। झूंगर का भात, सिसूण का साग, मडुवे की रोटी और गुड़ या पिसे हुए नमक से ही संतोष कर लेते हैं। त्यौहारों के अवसर पर पूरी, सब्जी, पुवे, बड़े, छोई, खीर आदि प्रमुख हैं।

हिन्दु समाज में प्रचलित सोलह संस्कारों में जन्म छठी, नामकरण, चूडकरण, व्रतबंध, एवं विवाह संस्कार बड़े धूमधाम से मनाये जाते हैं। विभिन्न संस्कारों के अवसर पर भिन्न–भिन्न ''शकुनाखर'' या ''फाग'' गाये जाते हैं। कुमाऊँनी लोगों का जीवन–दर्शन नियतिवादी है। ईश्वर और क्षेत्रीय देवी–देवताओं में कुमाऊँनियों की अनन्य श्रद्धा और अगाध आस्था है। यहाँ के लोकगीतों में सर्वंत भाग्य की प्रबलता को स्वीकार किया गया है। विविध पर्व–उत्सव, मेले और त्यौहार कुमाऊँनी लोक जीवन के सांस्कृतिक एवं साहित्यिक धरोहर के संग्रहालय हैं। वर्ष भर छहों ऋतुओं ओर बारहो महीनों में किसी न किसी त्यौहार या उत्सव का आयोजन यहॉ के लोक–जीवन की प्रमुख विशिष्टता है। मेलों में गाये जाने वाले चॉचरी, झोड़ा, छपेली, बैर, चूड़ाकरण तथा घास–लकड़ी काटते, जंगल में काम करते गाये जाने वाले न्यौली आदि गीत गायक की उत्कृष्ट साहित्यिक अभिव्यक्ति का माध्यम बनते हैं।

लोकसंस्कृति को संजाये रखने में महिला लोककलाकारों का योगदान

लोकसंस्कृति को बनाये रखने में महिला लोककलाकारों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। पुराने समय से ही महिलायें पुरूषों के समान लोकसंस्कृति को संजोये रखने में अपना योगदान देती आ रही हैं। पुराने समय मे पहाड़ की महिलायें कृर्षि कार्यों में तथा अपने परिवार की देख–भाल में ही व्यस्त रहती थीं। उन्हें घर के काम–काज से बाहर कुछ करने का समय ही नहीं मिलता था। और कुछ महिलायें ऐसी थी कि जो लोकगीत, लोकवाद्य तथा लोकनृत्य करना तो चाहती थीं किन्तु समाज के डर से अपने मन के भावों को कहने से डरती थीं क्योंकि उस समय सांस्कृतिक कार्यक्रमों को करने का अधिकार किसी जाति विशेष के पास था। वहीं सांस्कृतिक कार्यक्रमों में प्रतिभाग कर सकते थे। सामान्य जनमानस में झोड़ा, चॉचरी, शकुनाखर, भगनौल, छपेली, न्यौली, हुड़की बौल, चैती गीत आदि प्रचलित थे। महिलायें घर के तथा कृर्षि कार्यों में व्यस्त होने के बावजूद भी अपनी लोकसंस्कृति से जुड़ी रहती थीं। काम के साथ–साथ वे अनेक प्रकार के लोकगीतों को गाती रहती थीं। जब महिलायें जंगल में घास या लकड़ी लेने जाती थीं तो उस समय उन्हें अपने मायके की याद आती थीं और मायके की

याद आने पर वे अक्सर न्यौली गीत गाया करती थीं। वर्तमान समय में तो संचार के बहुत से साधन उपलब्ध हैं जब चाहा तब हम स्मार्ट फोन के माध्यम से सभी से बात कर सकते हैं तथा सभी को देख सकते हैं परन्तु पुराने समय में संचार के कोई साधन उपलब्ध नहीं थे और सालों साल बीत जाने पर ही मायके जा पाते थे। तब महिलायें अक्सर यह न्यौली गीत गाया करती थीं।

ऐसे ही झोड़ा लोकगीत भी पुरूषों तथा स्त्रियों के समूहों द्वारा किसी गाथा में स्थानीय देवी दवे ताओं की स्तुति या किसी गाथा में निहीत पराक्रमी चरित्रों के चित्रण का बखान करते हुए गाया जाता है। झोड़ागीत में महिलायें बड़े समूह में एक–दूसरे का हाथ थामकर झूमते हुए यह गीत गाती हैं।

छपेली लोकगीत को पुरूष तथा स्त्रियॉ दोनों मिलकर गाते हैं। मुख्य गायक पुरूष होता है जो हुड़के की थाप के साथ इस गीत को गाता है किन्तु इस लोकगीत में भी पुरूषों के बराबर महिलाओं की भी भागीदारी रहती है। यह लोकगीत खुशी या उत्सव के अवसर पर गाया जाता है। इसमें महिलायें पुरूषों के साथ छपेली लोकगीत गाती भी हैं तथा नृत्य में भी प्रतिभाग करती हैं। ''चाँचरी'' लोकगीत प्रायः पर्व, उत्सवों और स्थानीय मेलों के अवसर पर गाई जाती है। यह लोकगीत गोल घेरा बनाकर गाया जाता है जिसमें स्त्री पुरूष पैरों एवं सम्पूर्ण शरीर को एक विशेष लय क्रमानुसार हिलाते डुलाते नृत्य करते हैं। इस लोकगीत में भी महिलायें बढ़ चढ़कर हिस्सा लेती हैं।

हुड़की बौल लोकगीत भी कुमाऊँनी लोकगीतों का एक प्रमुख प्रकार है। यह गीत कुमाऊँ में रोपाई (धान रोपाई) करत` समय महिलाओं द्वारा गाया जाता है जिसमें एक पुरूष हुड़का बजाता है तथा महिलायें रोपाई करते समय यह लोकगीत गाती हैं। इस लोकगीत को गाने का मुख्य कारण पहाड़ के थकानभरे जीवन में थोड़ा मनोरंजन करना है जिससे की कृषकों को थकान महसूस नहीं होती।

शकुनाखर गीत केवल महिलाओं द्वारा ही गाये जाते हैं। यह गीत मांगलिक कार्यों जैसे जनेऊ, विवाह, नामकरण संस्कार आदि में केवल महिलाओं द्वारा ही गाये जात` हैं। शकुनाखर गीतों में प्रथम पूज्य गणेश जी तथा ईष्ट देवी–देवताओं को याद किया जाता है। पहाड़ में शकुनाखर गीत सभी प्रकार के मांगलिक कार्यों से पहले गाये जाते हैं। इन गीतों को सिर्फ महिलायें ही गाती हैं।

चैती गीत भी प्रायः महिलाओं द्वारा ही गाया जाता है। पहाड़ में चैत के महीने (अप्रैल–मई) में महिलाओं के मायके (माँ का घर) से भिटोली दी जाती है। भिटौली का तात्पर्य है महिलाओं को मायके से उपहार स्वरूप कपड़े, मिठाइयाँ, गहन` आदि दिये जात`हैं इसी उपलक्ष्य मे महिलाओं द्वारा मायक`की याद में ये गीत गाये जाते हैं।

भगनौल भी चांचरी की तरह ही समहू में पुरूषों तथा महिलाओं द्वारा गाया जाता है यह लोकगीत भी खुशी के अवसर पर गाया जाता है इस गीत में महिलायें भी बढ़–चढ़कर भाग लेती हैं।

पुराने समय में भी कुमाऊँ में बहुत सी महिला लोककलाकार ऐसे थे जो की कुमाऊँनी लोकगीतों को गाते थे तथा अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों में प्रतिभाग भी करते थे और उन्हें लोकगीतों तथा लोकसंस्कृति का इतना अधिक ज्ञान था वर्तमान में शायद ही किसी को होगा। पुराने समय में महिलाओं के पास लोकगीतों, लोकधुनों का भण्डार था किन्तु अपनी प्रतिभा तथा लोकगीतों को लोगां तक पहुॅचाने का माध्यम नहीं था। उस समय महिलायें सिर्फ मांगलिक कार्यों जैसे जनेऊ, विवाह संस्कार, नामकरण आदि में ही शकुनाखर गीत गाया करती थीं। परन्तु वर्तमान में महिलाओं के पास अनेकों साधन उपलब्ध हैं जिनके माध्यम से वह अपनी प्रतिभा तथा लोकगीतों को लोगों तक पहुॅचा रहे हैं। वर्तमान में निम्नलिखित माध्यमों से महिलायें लोकसंस्कृति का प्रचार–प्रसार कर रही हैं।

आकाशवाणी के माध्यम से :– वर्तमान आकाशवाणी ''आल इण्डिया रेडियो'' पुराने समय से ही संस्कृति के प्रचार प्रसार में कारगर सिद्ध हुआ है। कुमाऊँ की पहली आकाशवाणी की महिला लोकगायिका कबूतरी देवी जी थीं। जिन्होंने अपने सैकड़ों गीत आकशवाणी के माध्यम से लोगों तक पहुॅचाये। आल इण्डिया रेडियो में पहली उत्तरायन लोकगायिका बीना तिवारी जी हैं जिन्होंन` पूरा जीवन कुमाऊँनी लोकगीतों को संजोये रखने में लगा दिया। एसे ही धीरे–धीरे कई महिलायें इनसे प्रेरित होकर आगे आयी और आकाशवाणी में स्वर–वाद्य परीक्षा उत्तीर्ण कर वर्तमान में कुमाऊँनी संस्कृति का प्रचार प्रसार कर रही हैं। आकाशवाणी के माध्यम से महिलायें झोड़ा, चांचरी, न्योली, छपेली, भगनौल, चैती गीत, शकुनाखर, हुड़की बौल आदि लोकगीतों को उन लोगों तक भी पहुॅचाने का कार्य कर रही हैं जो लोग लोकगीतों को सुनना या सीखना चाहते हैं परंतु सीख नहीं पाते। अतः आकाशवाणी के माध्यम से बहुत सी महिलायें लोकगीतों को गा रही हैं तथा उन्हें जनमानस तक पहुॅचाने का कार्य कर रही हैं। आकाशवाणी प्रमुख माध्यम है जिसके माध्यम से बहुत सी महिला लोकगायिकायें संस्कृति का प्रचार–प्रसार करने का कार्य कर रही हैं।

संस्कृति विभाग के माध्यम से :– वर्तमान में संस्कृति विभाग के माध्यम से महिलायें लोकगीतों का प्रचार–प्रसार कर रही हैं। संस्कृति विभाग में भी महिलायें पहले स्वर–परीक्षा देती हैं और जो उत्तीर्ण होता है उन्हें उनकी गायिकी के अनुसार ग्रेड दिया जाता है फिर संस्कृति विभाग के माध्यम से लोकगायिकायें गाँव में, शहरों में, देश–विदेशों में अपने लोकगीतों की प्रस्तुतियाँ देती हैं। जिनके माध्यम से लोग अपने लोकगीतों तथा लोकसंस्कृति से जुड़े रहते हैं। और संस्कृति विभाग उन महिलाओं को प्रतिभा दिखाने का

अवसर प्रदान करता है जो अपने लोकगीतों को गाने में पारंगत हैं तथा लोकसंस्कृति का प्रचार–प्रसार करना चाहते हैं।

सांस्कृतिक संगठनों के माध्यम से :– कुमाऊँ में बहुत से सांस्कृतिक संगठन हैं जिनके माध्यम से हजारों महिलायें सांस्कृतिक कार्यक्रमों में प्रतिभाग कर रही हैं तथा लोकसंस्कृति तथा लोकगीतों का प्रचार–प्रसार कर रही हैं। इन संगठनों से कुछ महिलायें लोकगीतों को गाती हैं तथा कुछ महिलायें उन लोकगीतों में नृत्य प्रस्तुत करती हैं।

सांस्कृतिक संगठनों के माध्यम से कुमाऊँनी लोकगायिकायें अपनी प्रस्तुतियां देश–विदेश में दे रही हैं और आकाशवाणी तथा संस्कृति विभाग की भाँति सांस्कृतिक संगठन भी लोकसंस्कृति तथा लोकगीतों का प्रचार–प्रसार करने का महत्वपूर्ण माध्यम हैं।

सामाजिक माध्यम (सोशियल मीडिया) :– जैसा की सभी को विदित है वर्तमान में कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो कि सोशियल मीडिया (यूटयबू , फेसबुक, इंस्टाग्राम) आदि पर नहीं है। वर्तमान में सामाजिक माध्यम (सोशियल मीडिया) लोकसंस्कृति के प्रचार–प्रसार में सबसे मजबूत माध्यम है। महिलायें यूटयूब, फेसबुक, इंस्टाग्राम के माध्यम से लोकगीतों तथा लोकसंस्कृति से जुड़े रहते हैं और महिलायें अपनी प्रतिभा को लोकगीतों के ज्ञान को जनमानस तक पहुँचा रही हैं।

निष्कर्ष :– वर्तमान में महिलायें पुरूषों के समान ही अपनी लोकसंस्कृति को संजोये रखने में बढ़ चढ़कर हिस्सा ले रही हैं। एक–दूसरे से प्रेरित होकर अधिक–से–अधिक महिलायें आकाशवाणी, संस्कृति–विभाग, सांस्कृतिक संगठनों तथा सामाजिक माध्यमों से जुड़ रही हैं और लोकसंस्कृति तथा लोकगीतों का प्रचार–प्रसार कर रही हैं। पहाड़ों में पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं में परिश्रम एवं संघर्ष करने की शक्ति अधिक है यहां की अर्थव्यवस्था भी महिलाओं पर निर्भर है अतः यहॉ महिलाओं का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1– शर्मा प्रो0 डी0 डी0, 2017, उत्तराखण्ड का लोकजीवन एवं लोकसंस्कृति, अंकित प्रकाशन हल्द्वानी, पृ0 सं0 (183–188)

2– बलोदी डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद, 2008, उत्तराखण्ड समग्र ज्ञानकोश, बिनसर पब्लिशिंग कं0 देहरादून, अध्याय 3, पृ0सं0– 190

3– पोखरिया डॉ0 दवे सिंह, 1994, कुमाऊँनी भाषा साहित्य एवं संस्कृति, अल्मोड़ा बुक डिपो अल्मोड़ा, अध्याय 5, पृ0सं0 (1–10)